POLLUTION

NEW DELHI 7 NOVEMBER 2010 The Sunday Statesman

Slight increase in pollution during Diwali-week

indo-asian news service

NEW DELHI, 6 NOV: There was a marginal increase in air pollution in the capital during the Diwali-week, the Delhi government's pollution monitoring body said Saturday.

"Carbon monoxide and nitrogen oxide concentration have seen an increase during the week of Diwali in Delhi," a statement by Delhi Pollution Control Committee (DPCC) said.

The rise has been attributed to the increased use of firecrackers, besides the vehicular movement during the festive season.

DPCC monitored pollution levels at five locations - R.K. Puram, Mandir Marg, Punjabi Bagh, Civil Lines and Vasant Kunj.

Sulphur dioxide concentration was found to be well within limits on Diwali-eve and on Diwali night, but the concentration of particulate matter exceeded the limits at all locations.

"The increase in pollutant levels observed on Diwali night was also because of the early onset of winter and easy conditions for smog formation. It is not just the crackers," an official said.

Smog engulfs the street vision due to massive use of crackers and fireworks on Friday night, in the Capital on Saturday. **sns**

नवभारत टाइम्स । नई दिल्ली । सोमवार 29 नवंबर 2010

यमुना की सफाई अटकी

इंटरसेप्टर सीवर प्रोजेक्ट की बिडिंग अब तक नहीं

प्रमुख संवाददाता ‖ नई दिल्ली

यमुना को साफ रखने के लिए बनाई गई इंटरसेप्टर सीवर प्रोजेक्ट की अब तक बिडिंग भी नहीं हो पाई है। पहले यह बिडिंग 15 नवंबर को होनी थी लेकिन यह टल गई क्योंकि प्री बिडिंग मीटिंग में कंपनियों ने कई सवाल उठाए। यह अब दिसंबर में होगी।

1358 करोड़ रुपये का यह प्रोजेक्ट यमुना को साफ रखने के लिए बनाया गया है। इसके जरिए सीवरेज पानी को यमुना में गिरने से पहले पहले ही साफ किया जाएगा। प्रोजेक्ट के तहत तीन प्रमुख नालों और सात पंपिंग स्टेशनों के साथ 59 किलोमीटर का इंटरसेप्टर बिछाया जाएगा जिससे यह सुनिश्चित किया जा सके कि केवल साफ जल ही यमुना में गिरे। यमुना में 18 बड़े नाले गिरते हैं जो 70 पर्सेंट तक इसे प्रदूषित करते हैं। प्रोजेक्ट के पहले फेज में नजफगढ़, सप्लिमेंट्री और शाहदरा नालों से गिरने वाले सीवरेज को साफ किया जाएगा। यह प्रोजेक्ट दो साल में पूरा करने का टारगेट रखा है। इसके पूरा होने के बाद यमुना नदी में प्रदूषण को रोका जा सकेगा।

इस प्रोजेक्ट में 65 पर्सेंट खर्च दिल्ली सरकार और दिल्ली जल बोर्ड उठाएगा बाकी 35 पर्सेंट केंद्रीय शहरी विकास मंत्रालय देगा। इस प्रोजेक्ट के लिए 20 अक्टूबर को प्री बिडिंग मीटिंग हुई थी। जिसमें करीब 25 देसी विदेशी कंपनियों ने भाग लिया था। कंपनियों ने नियम और शर्तों को लेकर कई सवाल उठाए। कई विदेशी कंपनियों ने कहा कि नियम कड़े हैं जिन्हें चेंज किया जाना चाहिए। जल बोर्ड के एक अधिकारी के मुताबिक इसके बाद बोर्ड ने नियम और शर्तों में थोड़ा बदलाव किया है। अब 18 दिसंबर को यह बिडिंग होगी। जिसमें वह कंपनी सिलेक्ट की जाएगी जो इस प्रोजेक्ट को पूरा करेगी।

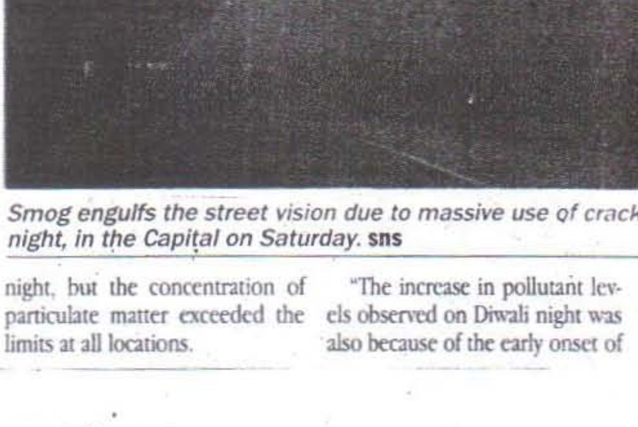

अरबों का प्रोजेक्ट

1358 करोड़ के इस प्रोजेक्ट के जरिए सीवरेज पानी को यमुना में गिरने से पहले साफ किया जाएगा। तीन प्रमुख नालों और सात पंपिंग स्टेशनों के साथ 59 किमी का इंटरसेप्टर बिछाया जाएगा ताकि साफ पानी ही यमुना में गिरे।

दो साल का टारगेट

प्रोजेक्ट के पहले फेज में नजफगढ़, सप्लिमेंट्री और शाहदरा नालों से गिरने वाले सीवरेज को साफ किया जाएगा। प्रोजेक्ट में 65 पर्सेंट खर्च दिल्ली सरकार और दिल्ली जल बोर्ड उठाएगा बाकी 35 पर्सेंट केंद्रीय शहरी विकास मंत्रालय देगा।

दैनिक जागरण नई दिल्ली, 2 नवंबर, 2010

पटाखों के प्रयोग से करें परहेज

नई दिल्ली, जागरण संवाददाता : रोशनी के पर्व दिवाली में चलाए जाने वाले बम-पटाखों के शोर व धुआं पर्यावरण को दूषित करने के साथ बीमारी का कारण भी बनती है। बम-पटाखों के धुएं से जहां पर्यावरण वैज्ञानिक वायु प्रदूषण को लेकर चिंता व्यक्त कर रहे हैं, वहीं चिकित्सक अस्थमा व सांस पीड़ितों को एहतियात बरतने की सलाह दे रहे हैं।

दिवाली के दिन पटाखे न सिर्फ वायु व ध्वनि प्रदूषण फैलाते हैं, बल्कि वातावरण में खतरनाक रासायनिक तत्व भी फैलाते हैं। इससे श्वास व अस्थमा के साथ चर्म व कैंसर के मरीजों की संख्या बढ़ रही है। पर्यावरण विशेषज्ञ डॉ. जार्ज ने बताया कि दिवाली के दौरान पटाखे चलाने से वातावरण में सल्फर डाइआक्साइड, कार्बन डाइआक्साइड व नाइट्रोजन डाइआक्साइड फैलता है। इससे पर्यावरण में काफी प्रदूषण फैलता है, जो चिंता का विषय है। आंकड़े बताते हैं कि पिछले पांच सालों में वातावरण में इन दूषित पदार्थों की मात्रा काफी बढ़ी है। ध्वनि प्रदूषण का मानक 45 डेसीबल है, लेकिन दिवाली के दिन यह बढ़कर दोगुना हो जाता है। उनका कहना है कि दिवाली के दिन पर्यावरण में सल्फर डाइआक्साइड की मात्रा हवा में बढ़ जाती है। इसके अलावा वातावरण में धूल की मात्रा भी बढ़ जाती है। वायु प्रदूषण की अधिकता से मानव स्वास्थ्य पर गहरा असर पड़ता है। इसके कारण लोग श्वास रोग, चर्म रोग आदि बीमारी से ग्रस्त हो सकते हैं। जिन लोगों को यह बीमारी है, उन्हें ज्यादा तकलीफ हो सकती है। खासतौर पर बच्चों का ध्यान रखना चाहिए, क्योंकि धुएं से होने वाली परेशानी से वह अनभिज्ञ रहते हैं। पटाखों से होने वाली बीमारी को लेकर चिकित्सकों का मानना है कि दिवाली के दिन खासतौर पर सांस संबंधी रोगों से पीड़ितों को सावधानी बरतनी चाहिए। कई बार धुएं में शामिल जहरीली गैस से उन्हें ज्यादा परेशानी हो जाती है। श्वास रोग विशेषज्ञ डॉ. पुष्पेंद्र वर्मा का कहना है कि दीपावली के दिन पटाखे से वातावरण में हाई रेट प्रदूषण फैलता है। इससे बुजुर्ग व बच्चों को अधिक परेशानी होती है, क्योंकि उनके फेफड़े व श्वास नली अतिसंवेदनशील होती है। लेकिन जिन लोगों को पुराना अस्थमा है, उन्हें खासतौर पर धुएं से बचना चाहिए। कार्बन मोनो आक्साइड अस्थमा के मरीजों को ज्यादा परेशानी पहुंचाता है। उन्होंने कहा कि धुएं के कारण लोगों को सूखी खांसी होती है और स्वच्छ हवा न मिलने के कारण यह समस्या ज्यादा बढ़ जाती है। ऐसे में जरूरी है कि लोग मुंह पर मास्क या कपड़ा लगाकर रखें।

वहीं पर्यावरण विभाग से जुड़ी शिखा गौड़ बताती है कि वह पिछले दो साल से पर्यावरण विभाग से जुड़ीं हुई है और दिवाली के दिन पटाखों से पर्यावरण पर पड़ने वाले असर से भली भांति परिचित है। हालांकि वह मानती है कि बच्चे पटाखे चलाने की जिद करते हैं, लेकिन ऐसे में लोगों को चाहिए कि कम प्रदूषण फैलाने वाले पटाखे खरीदें।

वातावरण में बढ़ जाती है सल्फर डाइआक्साइड, कार्बन डाइआक्साइड व नाइट्रोजन डाइआक्साइड की मात्रा

दीपावली मनाएं पर्यावरण बचाएं

नवभारत टाइम्स । नई दिल्ली । शुक्रवार 12 नवंबर 2010

क्लीन यमुना... गंदे पानी का ट्रीटमेंट कर नदी में फेंकने की गुंजाइश खत्म होगी

पहला जीरो डिस्चार्ज सिटी बनेगा नोएडा

विनोद शर्मा ॥ नोएडा

हिंडन और यमुना नदी के बीचोंबीच बसा नोएडा शहर अगले साल इन दोनों नदियों को अनमोल गिफ्ट देने की तैयारी में है। नोएडा अथॉरिटी शहर के सीवर या ड्रेनेज के पानी का ट्रीटमेंट करके और उसे ज्यादा से ज्यादा इस्तेमाल करके इन नदियों में जाने से रोकने की कोशिश कर रही है। इसके लिए डेढ़ सौ करोड़ की लागत से बन रहे चार सीवर ट्रीटमेंट प्लांट (एसटीपी) भी बनकर तैयार होने वाले हैं। इनके नए साल में काम शुरू कर देने की उम्मीद है। अगर ऐसा हो जाता है तो नोएडा देश का पहला जीरो डिस्चार्ज सिटी बन जाएगा।

इस्तेमाल के बाद पानी धरती के भीतर जाएगा और मदर फिल्टर से छनकर यह ग्राउंड वॉटर रीचार्ज करेगा

नामुमकिन से लग रहे इस काम को पूरा कर दिखाने के लिए अथॉरिटी जोरों से काम कर रही है। अथॉरिटी के चीफ मेंटिनेंस इंजीनियर यादव सिंह ने बताया कि नोएडा चेयरमैन मोहिंदर सिंह के निर्देश पर इस प्रोजेक्ट को अमली जामा पहनाया जा रहा है। सेक्टर-54 में 33 एमएलडी (मिलियन लीटर प्रतिदिन) का एसटीपी जनवरी अंत तक, सेक्टर 50 में 25 एमएलडी का एसटीपी मार्च के अंतिम सप्ताह व सेक्टर 123 में 35 एमएलडी का एसटीपी अप्रैल में नोएडा के स्थापना दिवस तक बनकर तैयार हो जाएगा। चौथा एसटीपी सेक्टर 168 में नवंबर 2011 तक पूरा करने का टारगेट है। इन चारों के पूरा होने के बाद नोएडा में नए एसटीपी की क्षमता 143 एमएलडी की हो जाएगी। अभी तक नोएडा में सेक्टर 54 व 50 में 61 एमएलडी की क्षमता के एसटीपी काम कर रहे हैं। इस पर करीब डेढ़ सौ करोड़ का खर्च हो रहा है।

यह प्लांट एसबीआर यानी सिक्वेशियल बैच रिएक्टर तकनीक से तैयार हो रहा है। प्रोजेक्ट के प्रभारी समाकांत श्रीवास्तव बताते हैं कि इस तकनीक में बाकी तकनीकों की अपेक्षा दस गुना कम जगह इस्तेमाल होगी। साथ ही ज्यादा पानी साफ किया जा सकता है। यही नहीं इससे ट्रीट किया गया पानी सिर्फ सिंचाई ही नहीं बल्कि कंस्ट्रक्शन वर्क, इंडस्ट्रियल कामों, फायरफाइटिंग, कूलिंग टावर आदि में भी इस्तेमाल हो सकता है। यानी पानी का ज्यादा से ज्यादा इस्तेमाल हो सकेगा और नदी में इसके जाने का कोई चांस भी नहीं रहेगा। प्रोजेक्ट इंजीनियर समाकांत श्रीवास्तव ने बताया कि सेक्टर 54 में कुल 60 एमएलडी का प्लांट होगा।

RURAL DEVELOPMENT

THE HINDU • TUESDAY, NOVEMBER 16, 2010

The biggest challenge in watershed programme

What is the use of forming green communities if they do not fetch benefits for the rural society?

A. Narayanamoorthy

There was a serious argument during the 1980s that the Green Revolution had bypassed the rainfed areas that accounted for close to 70 per cent of the cropped area and rural population. Therefore, the watershed development programme was introduced on a massive scale in the late '80s so as to improve the livelihood opportunities of the people living in rainfed areas. This it sought to do by such measures as increasing the productivity of land, conserving scarce water resources, and improving soil management. Today, the watershed development is arguably the largest programme implemented in the rural areas.

Community participation

There are any number of studies on the impact of water development programme (WDP). But not many researchers have gone deep into the process of community formation in a watershed area. This is precisely what this monograph attempts to do. What is the process through which community gets to be constructed? How does the sense of community come about? Is it based on instinct or on slow-changing sentiments? Is it independent of the surrounding state and its polity? How does this sense get to be conveyed, enacted and represented to outsiders and to the community itself? These are among the questions Arun de Souza tries to answer, rather dramatically, based on a field survey carried out in a watershed in Ahmednagar district of Maharashtra. Disagreeing with the view of the Institutional Economist school, which examined the rules and sanctions of the common property regimes, the author argues community must not be seen as one based merely on a sedimented past, but as an ongoing, multi-layered entity characterised by caste, class, kinship, political factions, neighbourhood, and so on.

These factors tend to change often and also threaten the equity and sustainability of watershed. Therefore, the local community cannot be treated as a given. This is the message the author puts across emphatically.

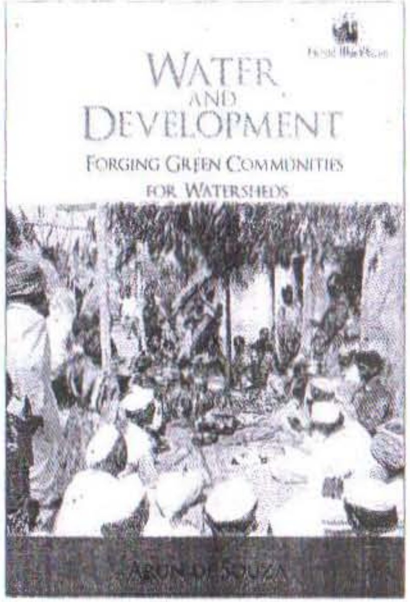

WATER AND DEVELOPMENT – Forging Green Communities for Watersheds: Arun de Souza; Orient Blackswan, 1/24, Asaf Ali Road, New Delhi-110024.

What is new in it? Policymakers are well aware that the community continues to change in any rural setting. How to factor in these changes in the guidelines for watershed development has always been the biggest challenge. Development brings a change in the forces that control the resources in villages, and one cannot control it easily. If the watershed committee formed at the village level – comprising the small/marginal farmers, agricultural labourers, and people belonging the SCs/STs – performs effectively and objectively, there is no way the resources created by the development programme can be exploited. Anna Hazare's Ralegaon Siddhi watershed in Maharashtra is a shining example of this.

It is true that, in many places, influential farmers try to corner WDP-generated resources. Can a vibrant community stop this? With the benefit of knowledge gained first-hand from a survey of agriculture and rural development related projects, including watersheds in Maharashtra, and having lived for close to 14 years in such areas, I could say those owning lands at the lower end of a watershed or close to percolation ponds tend to misappropriate the resources and also violate the cropping pattern suggested by the WDP guidelines.

No watershed committee, however active or vigilant, can stop this. This is because such deviance has gained wider acceptability, with a section of the poor farmers standing to benefit from it. What does it mean? It means that there are certain practices resorted to by the stakeholders that cannot be changed even by the active participation of the community.

No data

This well-written monograph on watersheds stands out for its sociological approach. Strikingly, it carries no quantitative data or tables on the resources generated by the watershed. What is the use of forming green communities if they do not fetch benefits for the rural society? No firm policy-related conclusion can be arrived at by studying the changing process of communities just in one watershed, because the socio-economic settings vary from one watershed to another. Nor can the real process of community formation and its impact on the benefits of WDP be fully understood either. One is not sure that the book will be useful for the policymakers. But it does make an interesting reading, novel-like.

दैनिक जागरण नई दिल्ली, 16 नवंबर, 2010

एक छोटे देश से हमारे किसानों के लिए बड़े सबक

इजरायल से लौटकर ब्रजबिहारी

महज 76 लाख की आबादी और लगभग 22 हजार किमी क्षेत्रफल वाले इजरायल ने फल-सब्जियों के उत्पादन और निर्यात में उल्लेखनीय प्रगति हासिल की है। उस देश के लिए यह उपलब्धि और भी महत्वपूर्ण है जिसकी दो तिहाई जमीन रेगिस्तान है और जिसके पास मीठे पानी के बहुत कम स्रोत हैं, लेकिन उस छोटे-से देश के पास ज्ञान और अनुभव का ऐसा खजाना है, जिसका इस्तेमाल कर हमारे किसान भी खुशहाल हो सकते है।

हालांकि वहां का कृषि उत्पादन काफी हाइटेक हो चुका है। यहां उसे जस का तस लागू करने का खर्च उठाना मुट्ठी भर किसानों के लिए ही संभव होगा लेकिन वहां बरती जा रही छोटी-छोटी सावधानियों को अपनाकर किसान अपनी आमदनी बढ़ा सकते है। वहां के कृषि एवं ग्रामीण विकास मंत्रालय के अधिकारी क्लिफ लव कहते है, 'भारत में 15 लाख हेक्टेयर में आम के बगीचे है लेकिन पैदावार मात्र 6-8 टन प्रति हेक्टेयर की ही मिल पाती है। इसके विपरीत इजरायल में सिर्फ 2000 हेक्टेयर में ही आम के बाग है जिनसे प्रति हेक्टेयर 25-35 टन की पैदावार हासिल होती है।' यह कैसे संभव हुआ? दरअसल, इजरायल में आम के पेड़ की शाखाओं की ऊपर से और किनारे से छंटाई कर दी जाती है। इससे पेड़ के तने ज्यादा मोटे नहीं हो पाते और उनकी लंबाई भी 4 मीटर से ज्यादा नहीं होती। इससे कम जगह में ज्यादा पेड़ लगाए जा सकते है और सिंचाई पर ज्यादा खर्च नहीं होता। अपने देश में आम के पेड़ की औसत लंबाई सात मीटर होती है और उनके तने काफी मोटे होते है। बागवानी की फसल तैयार होने के बाद उसे तोड़ने में भी हमारे किसान काफी असावधानी बरतते है। नतीजतन, काफी मात्रा में फल जमीन पर गिर जाते है। ऐसे फल बाहर से देखने में तो ठीक लगते है लेकिन गिरने के कारण उनके खराब होने की प्रक्रिया शुरू हो जाती है। फलों को तोड़ने के लिए मशीनों का इस्तेमाल किया जाना चाहिए। सब्जियों की बात की जाए तो सबसे ज्यादा सावधानी उनके पौध के चुनाव में बरतनी चाहिए। अपने देश में ज्यादातर किसान खुद ही बीज डालकर पौध तैयार करते है। इसमें सभी पौध एक बराबर विकसित नहीं होते है। इसका नतीजा यह होता है कि कुछ पौधे पहले तैयार हो जाते है और कुछ बाद में। इससे न सिर्फ सिंचाई में दिक्कत आती है ऐसी फसल की एक साथ कटाई भी संभव नहीं होती।

पंजाब के मोहाली के पास आधुनिक नर्सरी चला रहे एटन न्यूबॉर के अनुसार, 'भारतीय किसान कृषि लागत को लेकर काफी संवेदनशील होते है, लेकिन उन्हें यह सोचना चाहिए कि पौध पर ज्यादा पैसे खर्च करना उनके लिए ही फायदेमंद होगा।' सब्जियों और फलों की फसल के बाद उन्हें लंबे समय तक संरक्षित करने की जरूरत होती है ताकि सही समय पर सही दाम मिलने पर उन्हें बेचा जा सके। इसके लिए कोल्ड स्टोरेज एक विकल्प है लेकिन कुछ सामान्य तरीके अपनाकर भी उन्हें सुरक्षित रखा जा सकता है। मसलन, इजरायल में आलू को संरक्षित करने के लिए पुदीने के तेल का इस्तेमाल किया जा रहा है। इस तकनीक को हमारे किसान भी अपना सकते है।

URBAN DEVELOPMENT

THE HINDU • WEDNESDAY, NOVEMBER 24, 2010

Trees cut freely, replanted scarcely in Delhi

Smriti Kak Ramachandran

NEW DELHI: The Capital city that takes pride on its "greens" has been rather lenient when it comes to enforcing compulsory tree plantation laws. For every tree that is cut by an agency or an individual, 10 saplings have to be planted and a refundable security amount of Rs.1,000 per tree cut has to be deposited, says the Delhi Tree Preservation Act, 1994.

However, an application filed under the Right to Information Act seeking details of trees cut in the city reveals that several agencies defaulted on the number of trees that were to be planted under the compulsory plantation rule. Some have not bothered to plant even one tree despite depositing the security amount.

Vinod Jain, of non-government organisation Tapas, who sought details on the trees that have been cut from 2003 till date, said: "There are several agencies like the Municipal Corporation of Delhi, the Delhi Development Authority, the Delhi Transport Corporation and the Public Works Department that sought permission for felling trees, paid up the security deposit, but there is no data on the exact number of trees that have been planted as compensation for the felled ones. Each agency has to verify the number of trees planted against the felled ones. In some divisions the trees planted as compensation are either less than what was required or not planted at all."

Several agencies default on the number of trees to be re-planted

According to Mr. Jain, a number of agencies have been issued notices for not carrying out the plantation work and few have had their security deposits forfeited.

In the North Zone, according to the RTI reply, between 2003 and 2010 permission was granted for felling 1,867 trees and 13,567 should have been replanted. However, the re-plantation figure should ideally have been 18,670.

In the West Zone between 2003 and 2010, 20,480 trees were allowed to be cut and a target of planting 225,119 trees against those cut was set. In the South Zone between 2000 and 2009, 30,679 trees were allowed to be cut and 246, 225 trees were supposed to be planted as compensation.

"About 89,017 trees have been allowed to be cut for various works of agencies like the MCD, PWD, DMRC and the DDA. But the government has been lax in ensuring that for each tree cut, 10 are actually being planted. In some cases only a few saplings are planted in place of full-grown trees. There is no law that specifies that if a tree of a certain utility and height is cut, there should be a comparable replacement," said Mr. Jain.

He said the practice of cutting trees from inside the limits of the city and re-forestation on the outskirts is also flawed. "The DMRC, for instance, plants trees against the ones that they sought permission to fell. But these trees are planted at far away places like the forest in Aya Nagar, whereas the trees were cut from within the city limits."

HINDUSTAN TIMES, NEW DELHI
THURSDAY, NOVEMBER 04, 2010

Ride to IGI Airport set to get a green boost

Sanjeev K Ahuja
sanjeev.ahuja@hindustantimes.com

GURGAON: The Haryana Forest Department Corporation (HFDC) will give a green touch to the Delhi portion of NH 8 that falls between Dhaula Kuan and RTR Marg flyover.

The upgrade, which will also cover NH 1 between Karnal Bypass and Singhu Border, will add ornamental grass, flowering shrubs and trees.

The ₹7.25-crore project, awarded by the National Highway Authority of India has to be completed over the next three months.

About four-five feet-high Gulmohar, Champa, Amaltas and Palm trees will also be planted.

The total number of such trees is expected to be 3,800.

Subhash Yadav, HFDC regional manager, said that the ground work on the project was kicked off even before the Commonwealth Games began.

"We have already started work at the Radisson Hotel roundabout (triangle) that connects Gurgaon Expressway with the Indira Gandhi International Airport," he added.

Earlier, the HFDC planted trees in Aya Nagar and Jonapur in the Mehrauli region.

Yadav said that the firm bagged the ₹1.15-crore Jonapur project from the UN Environmental Program during the Games.

GREEN CITY, CLEAN CITY

NH 8 - between Dhaula Kuan and RTR Marg flyover

- Plantation alongside and on the median of the highway
- Length: **2.5 km**
- Flowering shrubs: **15,000**
- Flowering trees like Gulmohar, Champa, Amaltas and Palm: **1,200**
- Ornamental grass carpeting: **18,000 square feet**
- Fencing of barbed wire around trees along the stretch
- Project cost: **₹2.76 crore**

NH 1 - between Karnal Bypass and Singhu Border

- Plantation alongside and on the median of the highway
- Length: **13.5 km**
- Flowering shrubs: **25,000**
- Flowering trees like Gulmohar, Champa, Amaltas and Palm: **2,600**
- Ornamental grass carpeting: **52,000 square feet**
- Fencing of barbed wire around trees along the stretch
- Project cost: **₹4.51 crore**

HINDUSTAN TIMES, NEW DELHI
MONDAY, NOVEMBER 29, 2010

Environment ministry writes to civic body about night sweeping

Neelam Pandey
neelam.pandey@hindustantimes.com

NEW DELHI: Because the Municipal Corporation of Delhi has been unable to implement night sweeping across the city, the Ministry of Environment and Forest has shot off a letter to the civic agency asking it to give "serious consideration" to the project.

An officer on special duty with the environment minister Jairam Ramesh has written to the MCD, saying the ministry has received several petitions on this matter.

Saying that night sweeping reduces pollution level and improves air quality, the letter has asked the civic agency to update the minister on the matter. "The Delhi High Court had directed the MCD to consider introducing night sweeping in the city on the lines of other metropolitan cities," reads the letter.

Instead of doing the work at night, MCD workers sweep roads early in the morning, which is said to increases pollution. HT FILE

The letter, which has been sent to municipal commissioner KS Mehra, states that by implementing night sweeping "ambient air quality in morning hours can be improved".

The civic agency has not implemented night sweeping in the city for the past many years citing several reasons. "It is quite difficult to implement this project. Vehicles are parked everywhere on the road how can our staff sweep the streets? Also, a number of our workers are women and they don't feel safe during night," said a senior MCD official.

Night sweeping was launched in December 2000 at the order of the Delhi High Court on a public interest litigation to curb dust pollution.

"They have been making excuses for the past many years. When other Indian cities can implement it why can't Delhi? Several studies have shown that sweeping roads in the morning adds to morning haze and dust raised during sweeping leads to asthma, bronchitis. It affects people who commute in the morning," said Ravinder Raj who had filed a PIL in the Delhi High Court asking the civic agency to start night sweeping.

THE HINDU • SUNDAY, NOVEMBER 14, 2010

Haryana bans manufacture, sale of plastic bags

Special Correspondent

CHANDIGARH: The Haryana Government has prohibited manufacture, sale, distribution and use of virgin and recycled plastic carry bags and recycled plastic containers.

Stating this on Saturday, Haryana Chief Minister Bhupinder Singh Hooda said that littering of plastic articles such as plates, cups, tumblers, spoons, forks and straw at public places such as parks, playgrounds, recreational places, tourist centres and religious places would not be permitted.

He said in areas having a special historical, religious and ecological significance, use of all types of plastic articles has been banned. Such places include Thanesar, Kurukshetra and Pehowa towns, precincts of Mansa Devi Temple, Panchkula and Sheetla Mata Temple, Gurgaon; public parks; wild life sanctuaries and national parks and Gram Panchayat, Morni.

The Haryana State Pollution Control Board would be the prescribed authority for enforcement of the provisions of these directions relating to manufacture and recycling of plastics.

The Municipal Commissioner or Chief Executive Officer of the concerned Municipal Corporation or Municipality would be the prescribed authority for enforcement of the provisions.

THE TIMES OF INDIA, NEW DELHI
FRIDAY, NOVEMBER 12, 2010

Austrian Town Taps Forests For Clean Energy

Here, wood fuels a green alternative

Amit Bhattacharya | TNN

Güssing (Austria): While debates rage across the world over the costs of moving away from fossil fuels, a tiny enclave of a small country in Europe is showing how green innovation and initiative can transform lives and spur the economy. This is the big story of little Güssing, a town of just 4,000 residents in a backward region of Austria, which in a span of a little more than a decade has given rise to the 'Güssing model' of sustainable energy.

Twenty years ago, Güssing was a dead-end town. Barely five kilometres from the border with Hungary, it lay under the shadow of the Cold War. With no incentive for industries, Güssing had little to offer by way of jobs. There was steady migration from the region and 70% of those who chose to stay on, commuted weekly to bigger cities like Vienna for work.

The lifting of the Iron Curtain did little to improve things. Under these bleak circumstances, the town in the early 1990s drew up an energy plan for the 27,000 residents of Güssing district (of which the town is the centre). Says Peter Vadasz, town mayor since 1992 and one of the key figures in Güssing's turnaround, "In 1995, we found the annual energy bill of the area was 6.2 million euros. All this money was going out as we were dependent on the outside world for electricity, heating and motor fuels.""

The plan was to replace fossil fuels with local renewables. In 1996, the European Centre for Renewable Energy came up in Güssing to coordinate research. Various projects began but the challenge was to efficiently tap the energy of the area's 45% forest cover. Grants from the federal government and European Union funded research leading to a breakthrough in wood gassification.

Gassification is a way of converting organic matter into gas in the absence of oxygen. The gas produced can be used to generate electricity, with the by-product, heat, being utilized for district heating. It can also be converted into methane used for heating or cooking, and also for biofuel production.

Güssing's flagship innovation was the 'fluidized bed steam gassification' technology. A biomass plant using the technology started in 2001. A collaborative effort involving private companies and public institutions, it draws energy from the region' s plentiful waste wood. It can produce 2,000 kWh of electric power as well as 4,500 kWh of heat. Clean diesel production from the wood gas is at a demonstration stage.

The plant has transformed Güssing. Says Vadasz, "From an outflow of 6.2 million euros on energy, the district in 2005 was producing 15 million euros worth of energy from local renewables. Gassification is a clean technology. This and use of other renewables like solar power has helped cut our carbon emissions by 70% – the deepest reduction across Europe. People have become richer too, with municipal tax receipts rising 300%."

Güssing now has more control over its energy costs. "During the 2000s, the more oil prices rose, the more we smiled," Vadasz adds. And jobs are here too. Around 50 companies have set up units around the town, many of them attracted by the cheap heating, creating 1,100 jobs in the region.

GREEN SPINOFF: From a town known for its medieval Hungarian castle, Güssing now draws eco-tourists who flock to its wood gassification plant to witness the town's environmental breakthrough

Güssing today is at the frontier of green tech, its research centres driving the thrust towards new technologies. It draws around 20,000 tourists keen on witnessing the town's turnaround.

But does the story have a takeaway for India, with its problems of population, poverty and under-industrialization? Says Vadasz, "At the heart of the Güssing model is the replacement of fossil fuels by locally available renewables...We found solutions that worked for us. You'll have to find yours."

(The author visited Güssing at the invitation of the European Union)